आत्मनिर्भर भारत और बापू का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त

डॉ0 उत्तरा यादव,

एसोसिएट प्रोफेसर–समाजशास्त्र विभाग,
महिला कालेज,लखनऊ

शोध सारांश

महात्मा गाँधीजी का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त सम्यक् समाजवाद के लिए अति आवश्यक है। उनका कहना था कि वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत उद्योग, व्यवसाय आदि के द्वारा किसी को धन–सम्पदा मिल गयी तो उसे यह नहीं मानना चाहिए कि उस पर उसका स्वामित्व है। उसे तो यह मानना चाहिए कि मैं तो इस धन–सम्पदा का ट्रस्टी मात्र हूँ और मुझे इसमें से उतना ही उपयोग करने का अधिकार है जितने में मेरी आवश्यकता की पूर्ति के लिए चाहिए। ऐसा होने पर समाज में शोषण एवं संघर्ष नहीं होगा। गाँधीजी का मानना था कि जो सम्पत्ति पूंजीपतियों के पास है वह उनके पास धरोहर के रूप में है। पूंजीवाद के कारण दुनिया भर में बेरोजगारी बढ़ी है और श्रम की महत्ता कम हुई है। बेरोजगारी ने समाज की सबसे निचली इकाई को कमजोर किया है। महात्मा गाँधी के अनुसार पूंजीपति और अधिक व्यवसायिक आमदनी वाले व्यक्तियों को अपनी जरूरतों को सीमित करना चाहिए, तभी बची हुई आमदनी जरूरतमंदों पर खर्च की जा सके।पूंजीपतियों और जमींदारों को चाहिए कि वे ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त को अपनाये। 'हरिजन' में उन्होंने लिखा था– ''मान लीजिए, मेरे पास व्यापार, उद्योग अथवा अन्य किसी वैधानिक तरीके से अर्जित किया गया पर्याप्त धन जमा हो जाता है, तो मुझे जानना चाहिए कि वह सारा का सारा धन मेरा नहीं है. उसमें से सिर्फ उतना ही धन मेरा है, जो मेरे सम्मानजनक जीवन जी ने के अधिकार के अंतर्गत आता है।''ट्रस्टीशिप सिद्धान्त निजी सम्पत्ति का उस समय तक मान्यता प्रदान नहीं करता जब तक कि वह समाज द्वारा मान्य एवं उसके कल्याण के लिए उपयोग में की गयी हो। यह सम्पत्ति को दूसरों के साथ बाँटने, जरूरतमंदों के साथ मिलकर बांटकर खाने पर जोर देता है।

मुख्य शब्दः *सम्यक्, न्यासिता, ट्रस्टीशिप, सम्पदा, समानता, जनित, सम्मानजनक, एकाधिकार, कल्याण*

महात्मा गाँधीजी का ट्रस्टीशिप सिद्धान्त सम्यक् समाजवाद के लिए अति आवश्यक है। गाँधीजी ने अपनी अर्थरचना एवं अर्थव्यवहार के संबंध में विचार करते समय साधनों पर किसका स्वामित्व रहे, इस पर भी विचार किया था, जिसे ट्रस्टीशिप/न्यासिता एवं संरक्षकत्व के सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है। उनका कहना था कि वर्तमान व्यवस्था के अंतर्गत उद्योग व्यवसाय आदि के द्वारा किसी को धन–संपदा मिल गई तो उसे यह नहीं मानना चाहिए कि इस पर उसका स्वामित्व है। उसे तो यह मानना चाहिए कि मैं तो इस धन संपदा का ट्रस्टी मात्र हूँ और मुझे इसमें से उतना ही उपयोग करने का अधिकार है, जितना मेरी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चाहिए, शेष को फिर से समाज के कार्य में लगा देना चाहिए। ऐसा होने पर समाज में संघर्ष व शोषण नहीं होगा और धीरे–धीरे आर्थिक समानता की स्थिति भी आ जाएगी। इस सिद्धांत का सर्वोत्तम संदेश हमें ईशोपनिषद् के प्रथम श्लोक में मिलता है–**'ईशावास्यमिदम् सर्वम् यत्किञ्च**

जगत्यां जगत्। तेन त्येक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।। इसमें कहा गया है कि जो कुछ भी देश में उपलब्ध साधन–संपदा है, उसका पूर्ण स्वामित्व तो ईश्वर के पास ही है। हमारे पास जो कुछ धन–संपदा उपलब्ध है, उसके हम ट्रस्टी/न्यासी मात्र हैं। संभवतः इसी से प्रेरित होकर श्रद्धेय विनोबाजी ने ग्राम दान–भूदान का आंदोलन चलाया था। आज के युग में अजीम प्रेम जी, टाटा ग्रुप और बिल गेट्स इत्यादि ने अपनी आय का बहुत बड़ा हिस्सा समाज के हित में दान दिया है।

महात्मा गांधी जब दक्षिण अफ्रीका में थे तब 1903 में उन्होंने ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त प्रतिपादित किया था। गांधी जी के ट्रस्टीशिप अर्थात न्यासिता के सिद्धान्त के मूल में यह है कि पूंजी का असली मालिक पूंजीपति नहीं बल्कि पूरा समाज है, पूंजीपति तो केवल उस संपत्ति का रखवाला है। गांधी जी का यह मानना था कि जो संपत्ति पूंजीपतियों के पास है, वह उसके पास धरोहर के रूप में है। महात्मा गांधी का कहना था कि पूंजीवाद के कारण दुनिया भर में बेरोजगारी बढ़ी है और श्रम की महत्ता कम हुई है। बेरोजगारी ने समाज की सबसे छोटी इकाई को कमजोर किया है। अगर धनवानों ने अपनी धन–दौलत और उससे प्राप्त शक्ति का स्वेच्छा से त्याग नहीं किया और आम जनता को उसके हित में साझीदार नहीं बना या तो निश्चित रूप से एक दिन हिंसक और रक्तरंजित क्रांति हो जाएगी। महात्मा गांधी का कहना था कि इन सारी समस्याओं का समाधान ट्रस्टीशिप सिद्धांत में निहित है। गांधी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त के अनुसार जो व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं से अधिक संपत्ति एकत्रित करता है, उसे केवल अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु संपत्ति के उपयोग करने का अधिकार है, शेष संपत्ति का प्रबंध उसे एक ट्रस्टी की हैसियत से देखभाल कर समाज कल्याण पर खर्च करना चाहिए। महात्मा गांधी मानते थे कि सभी लोगों की क्षमता एक सी नहीं हो ती है, कुछ लोगों की कमाने की क्षमता अधिक होती है तो कुछ लोगों की कम हो ती है, इसलिए जिनके कमाने की क्षमता अधिक है उन्हें कमाना तो अधिक चाहिए किंतु अपनी जरूरतों को पूरी करने के बाद शेष राशि समाज के कल्याण पर खर्च करना चाहिए। महात्मा गांधी के अनुसार पूंजीपति और अधिक व्यवसायिक आमदनी वाले व्यक्तियों को अपनी जरूरतों को सीमित करना चाहिए तभी बची हुई आमदनी जरूरतमंदों पर खर्च की जा सकेगी।

गाँधीजी व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्वामित्व के सिद्धान्त के विरुद्ध थे। वे सारे देश की सम्पत्ति को सम्पूर्ण समाज की सम्पत्ति मानते थे। उनके अनुसार सभी भूमि गोपाल की थी, जिन लोगों के पास देश व समाज की सम्पत्ति है, उन्हें उस सम्पत्ति का अपने अपको स्वामी न मानकर 'न्यासी' समझना चाहिये। यही ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त है।

गाँधीजी का विश्वास था कि बड़े–बड़े उद्योगों की स्थापना से या किसी अन्य प्रकार से सम्पत्ति का संचय समाज में अन्य लोगों के सहयोग के बिना सम्भव नहीं है। अतः जिन लोगों के पास भी सम्पत्ति संचित हुई है, वह अन्य लोगों के सहयोग से ही हुई है और उस पर सभी का हक है। ट्रस्टी को स्वयं को समाजिक कार्यकर्त्ता समझना चाहिये। उन्हें भी उतना ही पारिश्रमिक मिलना चाहिये, जितना राज्य तय करे। मूल ट्रस्टी अपना उत्तराधिकारी राज्य की स्वीकृति से चुन सकता है।

गाँधीजी के ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त की निम्नलिखित मुख्य बातें हैः–

1. यह सिद्धान्त वर्तमान व्यवस्था को समता पर आधारित व्यवस्था में बदलने का प्रयत्न है। यह पूँजीवाद को कोई संरक्षण प्रदान नही करता बल्कि उसको स्वयं को सुधारने का एक अवसर प्रदान करता है।

2. यह सम्पत्ति के निजी स्वामित्व को स्वीकार नहीं करता।
3. यह सम्पत्ति के विषय में समाज के हित को ध्यान में रखते हुए राज्य के हस्तक्षेप की स्वीकृति देता है।
4. इसके द्वारा मनुष्यों की न्यूनतम और अधिकतम आय को निश्चित करने का सुझाव मिलता है।
5. आर्थिक उत्पादन का सामाजिक आवश्यकताओं द्वारा निर्धारण होना चाहिये न कि किसी की व्यक्तिग इच्छाओं द्वारा।

गाँधीजी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त की आलोचना अनेक विद्वानों ने यह कहकर की है कि पूँजीपति इस सिद्धान्त से प्रभावित नहीं हो सकते, वे अहिंसात्मक तरीकों से अपनी व्यवस्था में परिवर्तन नहीं करेंगे। ट्रस्टीशिप सिद्धान्त पूँजीपतियों को अपनी स्थिति दूसरे ढंग से सुदृढ़ करने में सहायता देगा। इस प्रकार यह सिद्धान्त न तो प्रभावशाली है और न ही व्यवहारिक।

गाँधीजी पर जॉन रस्किन का प्रभाव था। जो स्वयं बाइबिल से प्रभावित थे। रस्किन का मानना था कि पूंजीवाद जनित बुराइयों का समाधान ईसाई धर्म की मर्यादाओं में संभव है। अपनी पुस्तक 'अनटू दिस लास्ट' में रस्किन ने बाइबिल से एक उद्धरण दिया है. उसमें कहा गया है कि उत्पादन के लाभ पर सभी का समान अधिकार है। उसका भी जो सबसे अंतिम सिरे पर स्थित है। उद्धरण में एक किसान काम पर देर से पहुचने वाले श्रमिक को भी उतनी ही मजदूरी देने की घोषणा करता है, जितनी समय पर पहुंचने वाले को संदेश है कि दुनिया परमात्मा आशीर्वाद लुटाने के लिए है, न कि व्यापार द्वारा लाभ कमाने के लिए इस अन्त्योदयी भावना ने गांधी जी को प्रभावित किया था। यही बीजतत्व प्रकारांतर में ट्रस्टीशिप की प्रेरणा बना।

गाँधीजी ने 'ट्रस्टीशिप' का विचार पहले–पहल पत्रकारों द्वारा आर्थिक समानता को लेकर किए गए प्रश्न के उत्तर में प्रकट किया था। पृथ्वी पर मौजूद संपूर्ण संपदा पर समस्त मानव समुदाय का अधिकार मानते हुए, वे उसका उतना ही उपयोग करने के पक्ष में थे, जितना सम्मानजनक जीवन, वैसा जीवन जैसा अन्य करोड़ों नागरिक जीते हैं, जीने के लिए आवश्यक हो बाकी बचा हुआ धन समाज का है, अतएव उसका उपयोग समाज–कल्याण के निमित्त ही किया जाना चाहिए, ऐसा उनका मानना था। उन्होंने लिखा था कि यह सिद्धांत वर्तमान पूंजीवादी व्यवस्था को समतावादी समाज में बदलने की युक्ति से परचाता है। इसमें पूंजीवाद एवं एकाधिकारवाद के लिए कोई स्थान नहीं है। यह वर्तमान शक्तिशाली वर्ग को स्वयं को बदलने का अवसर उपलब्ध कराता है। यह इस विश्वास पर टिका है कि मानवीय प्रकृति सहयोग और सामंजस्य से भरपूर है। मनुष्य स्वभाव से भला होता है मात्र अपने स्वार्थ के लिए दूसरे को मुश्किल में डालना उसकी मूल प्रवृत्ति नहीं है। वे चाहते थे कि समाज के शक्तिशाली वर्ग यानी पूंजीपति और सामंत वर्ग अपने से छोटे लोगों के बारे में सोचें। यह मानकर चलें की उनका धन–संपदा परमात्मा की ओर से उन्हें लोक कल्याण के निमित्त सौंपी गई है। इसलिए उनका कर्तव्य है कि अपनी संपत्ति को लोकनिधि मानते हुए उसका उपयोग बहुजन के कल्याण के निमित्त करें।

उनका मानना था कि समस्त संपत्ति ईश्वर की है। पूंजीपतियों और जमींदारों को चाहिए कि वे ट्रस्टीशिप के सिद्धांत को अपनाएं। जमींदार स्वयं को भूमि का संरक्षक–मात्रा मानते हुए, जमीन जोतने–बोने का अधिकार किसानों को खुशी–खुशी सौंप दें। पूंजीपति अपने कारखानों में कार्यरत मजदूरों के साथ सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करें। मान लें कि उनके पास जो पूंजी और धन–संपदा है, वह समाज की धरोहर है. 'हरिजन'

में उन्होंने लिखा था कि– **'मान लीजिए, मेरे पास व्यापार, उद्योग अथवा अन्य किसी वैधानिक तरीके से अर्जित किया गया पर्याप्त धन जमा हो जाता है, तो मुझे जानना चाहिए कि वह सारा का सारा धन मेरा नहीं है. उसमें से सिर्फ उतना ही धन मेरा है, जो मेरे सम्मानजनक जीवन जी ने के अधिकार के अंतर्गत आता है, उस अवस्था में शेष धन का उपयोग समाज के दूसरे लोग भी करें, इससे बेहतर तो कुछ हो ही नहीं सकता। मुझे यह मान लेना चाहिए कि शेष धन पूरे समुदाय का है, अतएव उसका उपयोग सामुदायिक कल्याण के लिए ही किया जाना चाहिए'।**

ट्रस्टीशिप का सिद्धांत निजी संपत्ति को उस समय तक मान्यता प्रदान नहीं करता, जब तक कि वह समाज द्वारा मान्य तथा उसके कल्याण के लिए उपयोग न की गई हो। यह संपत्ति के स्वामित्व एवं उपयोग का निषेध नहीं करता, बल्कि उसको दूसरों के साथ बांटने, जरूरतमंदों के साथ मिल बांटकर खाने पर जोर देता है। वह राज्य को निर्देश देता है कि वह पूंजीपतियों को अपने संसाधनों का उपयोग लोक कल्याण हेतु करने के लिए प्रोत्साहित करे। समाज में इतनी विषमता न पनपने दें कि एक वर्ग का अपना ही जीवन उसके लिए समस्या बन जाए। राज्य–नियोजित ट्रस्टीशिप के अनुसार व्यक्ति विशेष को निजी कामनाओं की पूर्ति के लिए धन–संचय करने तथा उनके उसका निजी उपयोग करने की अनुमति नहीं होती गांधी जी चाहते थे कि न्यूनतम मजदूरी की दरें आकर्षक हों. आर्थिक समानता के स्तर को बनाए रखने के लिए मनुष्य की अधिकतम आय की सीमा भी निर्धारित हो। न्यूनतम एवं अधिकतम मजदूरी के बीच का अंतर तर्कसम्मत तथा समानता के सिद्धांत को सामने रखकर तय किया जाना चाहिए। इस अंतर की समय–समय पर समीक्षा होती रहनी चाहिए, ताकि समाज के आर्थिक स्तर पर होने वाले विभाजन को रोका जा सके।

''मेरा ट्रस्टीशिप का सिद्धांत कोई ऐसी चीज नहीं है, जो काम निकालने के लिए आज घड़ लिया गया हो। अपनी मंशा छिपाने के लिए खड़ा किया गया आवरण तो वह हरगिज नहीं है। मेरा विश्वास है कि दूसरे सिद्धांत जब नहीं रहेंगे, तब भी वह रहेगा। उसके पीछे तत्त्वज्ञान और धर्म के समर्थन का बल है। धन के मालिकों ने इस सिद्धांत के अनुसार आवरण नहीं किया है, इस बात से यह सिद्ध नहीं होता कि वह सिद्धांत झूठा है, इससे धन के मालिकों की कमजोरी मात्र सिद्ध होती है। अहिंसा के साथ किसी दूसरे सिद्धांत का मेल ही नहीं बैठता। अहिंसक मार्ग की खूबी यह है कि अन्यायी यदि अपना अन्याय दूर नहीं करता, तो वह अपना नाश खुद ही कर डालता है। क्योंकि अहिंसक असहयोग के कारण या तो वह अपनी गलती देखने और सुधारने के लिए मजबूर हो जाता है या वह बिल्कुल अकेला पड़ जाता है।'' ('हरिजन' 16 दिसंबर, 1939)

'मैं इस राय के साथ निःसंकोच अपनी सम्मत्ति जाहिर करता हूँ कि आम तौर पर धनवानकृ केवल धनवान ही क्यों, बल्कि ज्यादातर लोगकृइस बात का विशेष विचार नहीं करते कि वे पैसा किस तरह कमाते हैं। अहिंसक उपाय का प्रयोग करते हुए यह विश्वास तो होना ही चाहिए कि कोई आदमी कितना ही पतित क्यों न हो, यदि उसका इलाज कुशलतापूर्वक और सहानुभूति के साथ किया जाए तो उसे सुधारा जा सकता है। हमें मनुष्यों में रहने वाले दैवी अंश को प्रभावित करना चाहिए और अपेक्षा करनी चाहिए कि उसका अनुकूल परिणाम निकलेगा। यदि समाज का हर एक सदस्य अपनी शक्तियों का उपयोग वैयक्तिक स्वार्थ साधने के लिए नहीं, बल्कि सबके कल्याण के लिए करे, तो क्या इससे समाज की सुख–समृद्धि में वृद्धि नहीं होगी? हम ऐसी जड़ समानता का निर्माण नहीं करना चाहते, जिसमें कोई आदमी योग्यताओं का पूरा–पूरा उपयोग कर ही न सके। ऐसा समाज अंत में नष्ट हुआ बिना नहीं रह सकता। इसलिए मेरी यह

सलाह बिल्कुल ठीक है कि धनवान लोग चाहे करोड़ों रुपए कमाएँ (बेशक, ईमानदारी से), लेकिन उनका उद्देश्य वह सारा पैसा सबके कल्याण में समर्पित कर देने का होना चाहिए। 'तेन त्यक्तेन भुञजीथाः' मंत्र में असाधारण ज्ञान भरा पड़ा है। मौजूदा जीवन–पद्धति की जगह, जिसमें हरएक आदमी पड़ोसी की परवाह किए बिना केवल अपने ही लिए जीता है, सर्व–कल्याणकारी नई जीवन–पद्धति का विकास करना हो, तो उसका सबसे निश्चित मार्ग यही है।' ('हरिजन, 1 फरवरी, 1942)

सन्दर्भ

1. ट्रस्टीशिप की सैद्धान्तिकी तथा गाँधीवाद के अंतविर्रोध– https://omprakashkashyap.wordpress.com
2. याराना पूजीवाद से अलग है गाँधी जी का ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त–https://m-hindi.webdunia.com
3. महात्मा गॉधी का ट्रस्टीशिप सिद्धांत, किशोर मकवाणा, 'साहित्य अमृत', साहित्य एवं संस्कृति का संवाहक/मासिक/ISBN 2455.1171, पृ0 165
4. ईशोपनिषद/ईशावास्योपनिषद।

Copyright © 2017 *Dr. Uttara Yadav*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.